चौथी का जोड़ा इस्मत चुग़ताई

सहदरी के चौके पर आज फिर साफ - सुथरी जाजम बिछी थी। टूटी - फूटी खपरैल की झिर्रियों में से धूप के आडे - तिरछे कतले पूरे दालान में बिखरे हुए थे। मोहल्ले टोले की औरतें खामोश और सहमी हुई - सी बैठी हुई थीं; जैसे कोई बडी वारदात होने वाली हो। मांओं ने बच्चे छाती से लगा लिये थे। कभी - कभी कोई मुनहन्नी - सा चरचरम बच्चा रसद की कमी की दुहाई देकर चिल्ला उठता। "नांय - नायं मेरे लाल!" दुबली - पतली मां से अपने घुटने पर लिटाकर यों हिलाती, जैसे धान - मिले चावल सूप में फटक रही हो और बच्चा हुंकारे भर कर खामोश हो जाता।
आज कितनी आस भरी निगाहें कुबरा की मां के मुतफक्किर चेहरे को तक रही थीं। छोटे अर्ज की टूल के दो पाट तो जोड लिये गये, मगर अभी सफेद गजी क़ा निशान ब्योंतने की किसी की हिम्मत न पडती थी। काट - छाँट के मामले में कुबरा की माँ का मरतबा बहुत ऊँचा था। उनके सूखे-सूखे हाथों ने न जाने कितने जहेज सँवारे थे, कितने छठी-छूछक तैयार किये थे और कितने ही कफन ब्योंते थे। जहाँ कहीं मुहल्ले में कपड़ा कम पड़ जाता और लाख जतन पर भी ब्योंत न बैठती, कुबरा की माँ के पास केस लाया जाता। कुबरा की माँ कपड़े के कान निकालती, कलफ़ तोड़तीं, कभी तिकोन बनातीं, कभी चौखूँटा करतीं और दिल ही दिल में कैंची चलाकर आँखों से नाप-तोलकर मुस्कुरा उठतीं।
"आस्तीन और घेर तो निकल आएगा, गिरेबान के लिये कतरन मेरी बकची से ले लो।" और मुश्किल आसान हो जाती। कपडा तराशकर वो कतरनों की पिण्डी बना कर पकडा देतीं।
पर आज तो गजी क़ा टुकडा बहुत ही छोटा था और सबको यकीन था कि आज तो कुबरा की माँ की नाप-तोल हार जाएगी। तभी तो सब दम साधे उनका मुँह ताक रही थीं। कुबरा की माँ के पुर-इसतकक़ाल चेहरे पर फ़िक्र की कोई शक्ल न थी। चार गज़ गज़ी के टुकडे क़ो वो निगाहों से ब्योंत रही थीं। लाल टूल का अक्स उनके नीलगूँ ज़र्द

चेहरे पर शफक़ की तरह फूट रहा था। वो उदास-उदास गहरी झुर्रियाँ अँधेरी घटाओं की तरह एकदम उजागर हो गईं, जैसे जंगल में आग भडक़ उठी हो! और उन्होंने मुस्कुराकर कैंची उठाई।

मुहल्लेवालों के जमघटे से एक लम्बी इत्मीनान की सांस उभरी। गोद के बच्चे भी ठसक दिये गये। चील - जैसी निगाहों वाली कुंवारियों ने लपाझप सुई के नाकों में डोरे पिरोए। नयी ब्याही दुल्हनों ने अंगुश्ताने पहन लिये। कुबरा की मां की कैंची चल पडी थी।

सहदरी के आखिरी कोने में पलंगडी पर हमीदा पैर लटकाये, हथेली पर ठोडी रखे दूर कुछ सोच रही थी।

दोपहर का खाना निपटाकर इसी तरह बी - अम्मां सहदरी की चौकी पर जा बैठती हैं और बकची खोलकर रंगबिरंगे कपडों का जाल बिखेर दिया करती है। कूंडी के पास बैठी बरतन मांजती हुई कुबरा कनखियों से उन लाल कपडों को देखती तो एक सुर्ख छिपकली - सी उसके जर्दी मायल मटियाले रंग में लपक उठती। रूपहली कटोरियों के जाल जब पोले - पोले हाथों से खोल कर अपने जानुओं पर फैलाती तो उसका मुरझाया हुआ चेहरा एक अजीब अरमान भरी रौशनी से जगमगा उठता। गहरी सन्दूको - जैसी शिकनों पर कटोरियों का अक्स नन्हीं - नन्हीं मशालों की तरह जगमगाने लगता। हर टांके पर जरी का काम हिलता और मशालें कंपकंपा उठतीं।

याद नहीं कब इस शबनमी दुपट्टे के बने - टके तैयार हुए और गाजी क़े भारी कब्र - जैसे सन्दूक की तह में डूब गये। कटोरियों के जाल धुंधला गये। गंगा - जमनी किरने मान्द पड गयीं। तूली के लच्छे उदास हो गये। मगर कुबरा की बारात न आयी। जब एक जोडा पुराना हुआ जाता तो उसे चाले का जोडा कहकर सेंत दिया जाता और फिर एक नये जोडे क़े साथ नयी उम्मीदों का इफतताह (शुरुआत) हो जाता। बडी छानबीन के बाद नयी दुल्हन छांटी जाती। सहदरी के चौके पर साफ - सुथरी जाजम बिछती। मुहल्ले की औरतें हाथ में पानदान और बगलों में बच्चे दबाये झांझे बजाती आन पहुंचतीं।

'छोटे कपडे क़ी गोट तो उतर आयेगी, पर बच्चों का कपडा न निकलेगा।'
'लो बुआ लो, और सुनो। क्या निगोडी भारी टूल की चूलें पडेंग़ी?' और फिर सबके चेहरे फिक्रमन्द हो जाते। कुबरा की मां खामोश कीमियागर की तरह आंखों के फीते से तूलो - अर्ज नापतीं और बीवियां आपस में छोटे कपडे क़े मुताल्लिक खुसर - पुसर करके कहकहे लगातीं। ऐसे में कोई मनचली कोई सुहाग या बन्ना छेड देती, कोई और चार हाथ आगे वाली समधनों को गालियां सुनाने लगती, बेहूदा गन्दे मजाक और चुहलें शुरु हो जातीं। ऐसे मौके पर कुंवारी - बालियों को सहदरी से दूर सिर ढांक कर खपरैल में बैठने का हुक्म दे दिया जाता और जब कोई नया कहकहा सहदरी से उभरता तो बेचारियां एक ठण्डी सांस भर कर रह जातीं। अल्लाह! ये कहकहे उन्हें खुद कब नसीब होंगे। इस चहल - पहल से दूर कुबरा शर्म की मारी मच्छरों वाली कोठरी में सर झुकाये बैठी रहती है। इतने में कतर - ब्योंत निहायत नाजुक़ मरहले पर पहुंच जाती। कोई कली उलटी कट जाती और उसके साथ बीवियों की मत भी कट जाती। कुबरा सहम कर दरवाजे क़ी आड से झांकती।
यही तो मुश्किल थी, कोई जोडा अल्लाह - मारा चैन से न सिलने पाया। जो कली उल्टी कट जाय तो जान लो, नाइन की लगाई हुई बात में जरूर कोई अडंग़ा लगेगा। या तो दूल्हा की कोई दाश्त: (रखैल) निकल आयेगी या उसकी मां ठोस कडों का अडंगा बांधेगी। जो गोट में कान आ जाय तो समझ लो महर पर बात टूटेगी या भरत के पायों के पलंग पर झगडा होगा। चौथी के जोडे क़ा शगुन बडा नाजुक़ होता है। बी - अम्मां की सारी मश्शाकी और सुघडापा धरा रह जाता। न जाने ऐन वक्त पर क्या हो जाता कि धनिया बराबर बात तूल पकड ज़ाती। बिसमिल्लाह के जोर से सुघड मां ने जहेज ज़ोडना शुरु किया था। जरा सी कतर भी बची तो तेलदानी या शीशी का गिलाफ सीकर धनुक - गोकरू से संवार कर रख देती। लडक़ी का क्या है, खीरे - ककडी सी बढती है। जो बारात आ गयी तो यही सलीका काम आयेगा।
और जब से अब्बा गुजरे, सलीके क़ा भी दम फूल गया। हमीदा को एकदम अपने अब्बा याद आ गये। अब्बा कितने दुबले - पतले, लम्बे जैसे मुहर्रम का अलम! एक

बार झुक जाते तो सीधे खडे होना दुश्वार था। सुबह ही सुबह उठ कर नीम की मिस्वाक (दातुन) तोड लेते और हमीदा को घुटनों पर बिठा कर जाने क्या सोचा करते। फिर सोचते - सोचते नीम की मिस्वाक का कोई फूंसडा हलक में चला जाता और वे खांसते ही चले जाते। हमीदा बिगड क़र उनकी गोद से उतर जाती। खांसी के धक्कों से यूं हिल - हिल जाना उसे कतई पसन्द नहीं था। उसके नन्हें - से गुस्से पर वे और हंसते और खांसी सीने में बेतरह उलझती, जैसे गरदन - कटे कबूतर फडफ़डा रहे हों। फिर बी - अम्मां आकर उन्हें सहारा देतीं। पीठ पर धपधप हाथ मारतीं।
'तौबा है, ऐसी भी क्या हंसी।'
अच्छू के दबाव से सुर्ख आंखें ऊपर उठा कर अब्बा बेकसी से मुस्कराते। खांसी तो रुक जाती मगर देर तक हांफा करते।
'कुछ दवा - दारू क्यों नहीं करते? कितनी बार कहा तुमसे।'
'बडे शफाखाने का डॉक्टर कहता है, सूइयां लगवाओ और रोज तीन पाव दूध और आधी छटांक मक्खन।'
'ए खाक पडे ऌन डाक्टरों की सूरत पर! भल एक तो खांसी, ऊपर से चिकनाई! बलगम न पैदा कर देगी? हकीम को दिखाओ किसी।'
'दिखाऊंगा।' अब्बा हुक्का गुडग़ुडाते और फिर अच्छू लगता।
'आग लगे इस मुए हुक्के को! इसी ने तो ये खांसी लगायी है। जवान बेटी की तरफ भी देखते हो आंख उठा कर?'
और अब अब्बा कुबरा की जवानी की तरफ रहम - तलब निगाहों से देखते। कुबरा जवान थी। कौन कहता था जवान थी? वो तो जैसे बिस्मिल्लाह (विद्यारम्भ की रस्म) के दिन से ही अपनी जवानी की आमद की सुनावनी सुन कर ठिठक कर रह गयी थी। न जाने कैसी जवानी आयी थी कि न तो उसकी आंखों में किरनें नाचीं न उसके रुखसारों पर जुल्फ़ें परेशान हुईं, न उसके सीने पर तूफान उठे और न कभी उसने सावन - भादों की घटाओं से मचल - मचल कर प्रीतम या साजन मांगे। वो झुकी - झुकी, सहमी - सहमी जवानी जो न जाने कब दबे पांव उस पर रेंग आयी, वैसे ही

चुपचाप न जाने किधर चल दी। मीठा बरस नमकीन हुआ और फिर कडवा हो गया। अब्बा एक दिन चौखट पर औंधे मुंह गिरे और उन्हें उठाने के लिये किसी हकीम या डाक्टर का नुस्खा न आ सका।
और हमीदा ने मीठी रोटी के लिये जिद करनी छोड दी। और कुबरा के पैगाम न जाने किधर रास्ता भूल गये। जानो किसी को मालूम ही नहीं कि इस टाट के परदे के पीछे किसी की जवानी आखिरी सिसकियां ले रही है और एक नयी जवानी सांप के फन की तरह उठ रही है। मगर बी - अम्मां का दस्तूर न टूटा। वो इसी तरह रोज - रोज दोपहर को सहदरी में रंग - बिरंगे कपडे फ़ैला कर गुडियों का खेल खेला करती हैं।
कहीं न कहीं से जोड ज़मा करके शरबत के महीने में क्रेप का दुपट्टा साढे सात रुपए में खरीद ही डाला। बात ही ऐसी थी कि बगैर खरीदे गुज़ारा न था। मंझले मामू का तार आया कि उनका बडा लडक़ा राहत पुलिस की ट्रेनिंग के सिलसिले में आ रहा है। बी - अम्मां को तो बस जैसे एकदम घबराहट का दौरा पड ग़या। जानो चौखट पर बारात आन खडी हुई और उन्होंने अभी दुल्हन की मांग अफशां भी नहीं कतरी। हौल से तो उनके छक्के छूट गये। झट अपनी मुंहबोली बहन, बिन्दु की मां को बुला भेजा कि बहन, मेरा मरी का मुंह देखो जो इस घडी न आओ।
और फिर दोनों में खुसर - पुसर हुई। बीच में एक नजर दोनों कुबरा पर भी डाल लेतीं, जो दालान में बैठी चावल फटक रही थी। वो इस कानाफूसी की जबान को अच्छी तरह समझती थी।
उसी वक्त बी - अम्मां ने कानों से चार माशा की लौंगें उतार कर मुंहबोली बहन के हवाले कीं कि जैसे - तैसे करके शाम तक तोला भर गोकरू, छ: माशा सलमा - सितारा और पाव गज नेफे के लिये टूल ला दें। बाहर की तरफ वाला कमरा झाड - पौंछ कर तैयार किया गया। थोडा सा चूना मंगा कर कुबरा ने अपने हाथों से कमरा पोत डाला। कमरा तो चिट्टा हो गया, मगर उसकी हथेलियों की खाल उड ग़यी। और जब वो शाम को मसाला पीसने बैठी तो चक्कर खा कर दोहरी हो गयी। सारी रात करवटें बदलते गुजरी। एक तो हथेलियों की वजह से, दूसरे सुबह की गाडी से राहत आ रहे थे।

'अल्लह! मेरे अल्लाह मियां, अबके तो मेरी आपा का नसीब खुल जाये। मेरे अल्लाह, मैं सौ रकात नफिल (एक प्रकार की नमाज) तेरी दरगाह में पढूंग़ी।' हमीदा ने फजिर की नमाज पढक़र दुआ मांगी।

सुबह जब राहत भाई आये तो कुबरा पहले से ही मच्छरोंवाली कोठरी में जा छुपी थी। जब सेवइयों और पराठों का नाश्ता करके बैठक में चले गये तो धीरे - धीरे नई दुल्हन की तरह पैर रखती हुई कुबरा कोठरी से निकली और जूठे बर्तन उठा लिये।

'लाओ मैं धो दूं बी आपा।' हमीदा ने शरारत से कहा।

'नहीं।' वो शर्म से झुक गयीं।

हमीदा छेडती रही, बी - अम्मां मुस्कुराती रहीं और क्रेप के दुपट्टे में लप्पा टांकती रहीं। जिस रास्ते कान की लौंग गयी थी, उसी रास्ते फूल, पत्ता और चांदी की पाजेब भी चल दी थीं। और फिर हाथों की दो - दो चूडियां भी, जो मंझले मामू ने रंडापा उतारने पर दी थीं। रूखी - सूखी खुद खाकर आये दिन राहत के लिये परांठे तले जाते, कोफ्ते, भुना पुलाव महकते। खुद सूखा निवाला पानी से उतार कर वो होने वाले दामाद को गोश्त के लच्छे खिलातीं।

'जमाना बडा खराब है बेटी! ' वो हमीदा को मुंह फुलाये देखकर कहा करतीं और वो सोचा करती - हम भूखे रह कर दामाद को खिला रहे हैं। बी - आपा सुबह - सवेरे उठकर मशीन की तरह जुट जाती हैं। निहार मुंह पानी का घूंट पीकर राहत के लिये परांठे तलती हैं। दूध औटाती हैं, ताकि मोटी सी बालाई पडे। उसका बस नहीं था कि वो अपनी चर्बी निकाल कर उन परांठों में भर दे। और क्यों न भरे, आखिर को वह एक दिन उसीका हो जायेगा। जो कुछ कमायेगा, उसीकी हथेली पर रख देगा। फल देने वाले पौधे को कौन नहीं सींचता?

फिर जब एक दिन फूल खिलेंगे और फूलों से लदी हुई डाली झुकेगी तो ये ताना देने वालियों के मुंह पर कैसा जूता पडेग़ा! और उस खयाल ही से बी - आपा के चेहरे पर सुहाग खेल उठता। कानों में शहनाइयां बजने लगतीं और वो राहत भाई के कमरे को पलकों से झाडतीं। उसके कपडों को प्यार से तह करतीं, जैसे वे उनसे कुछ कहते हों।

वो उनके बदबूदार, चूहों जैसे सडे हुए मोजे धोतीं, बिसान्दी बनियान और नाक से लिपटे हुए रुमाल साफ करतीं। उसके तेल में चिपचिपाते हुए तकिये के गिलाफ पर स्वीट ड्रीम्स काढतीं। पर मामला चारों कोने चौकस नहीं बैठ रहा था। राहत सुबह अण्डे - परांठे डट कर जाता और शाम को आकर कोफ्ते खाकर सो जाता। और बी - अम्मां की मुंहबोली बहन हाकिमाना अन्दाज में खुसर - पुसर करतीं।
'बडा शर्मीला है बेचारा! ' बी - अम्मां तौलिये पेश करतीं।
'हां ये तो ठीक है, पर भई कुछ तो पता चले रंग - ढंग से, कुछ आंखों से।'
'अए नउज, ख़ुदा न करे मेरी लौंडिया आंखें लडाए, उसका आंचल भी नहीं देखा है किसी ने।' बी - अम्मां फख्र से कहतीं।
'ए, तो परदा तुडवाने को कौन कहे है!' बी - आपा के पके मुंहासों को देखकर उन्हें बी - अम्मां की दूरंदेशी की दाद देनी पडती।
'ऐ बहन, तुम तो सच में बहुत भोली हो। ये मैं कब कहूं हूं? ये छोटी निगोडी क़ौन सी बकरीद को काम आयेगी? '
वो मेरी तरफ देख कर हंसतीं 'अरी ओ नकचढी! बहनों से कोई बातचीत, कोई हंसी - मजाक! उंह अरे चल दिवानी!'
'ऐ, तो मैं क्या करूं खाला?'
'राहत मियां से बातचीत क्यों नहीं करती?'
'भइया हमें तो शर्म आती है।'
'ए है, वो तुझे फाड ही तो खायेगा न?' बी अम्मां चिढा कर बोलतीं।
'नहीं तो मगर' मैं लाजवाब हो गयी।
और फिर मिसकौट हुई। बडी सोच - विचार के बाद खली के कबाब बनाये गये। आज बी - आपा भी कई बार मुस्कुरा पडीं। चुपके से बोलीं, 'देख हंसना नहीं, नहीं तो सारा खेल बिगड ज़ायेगा।'
'नहीं हंसूंगी।' मैं ने वादा किया।
'खाना खा लीजिये।' मैं ने चौकी पर खाने की सेनी रखते हुए कहा। फिर जो पाटी के

नीचे रखे हुए लोटे से हाथ धोते वक्त मेरी तरफ सिर से पांव तक देखा तो मैं भागी वहां से। अल्लाह, तोबा! क्या खूनी आंखें हैं!

'जा निगोडी, मरी, अरी देख तो सही, वो कैसा मुंह बनाते हैं। ए है, सारा मजा किरकिरा हो जायेगा।'

आपा - बी ने एक बार मेरी तरफ देखा। उनकी आंखों में इल्तिजा थी, लुटी हुई बारातों का गुबार था और चौथी के पुराने जोडों की मन्द उदासी। मैं सिर झुकाए फिर खम्भे से लग कर खडी हो गयी।

राहत खामोश खाते रहे। मेरी तरफ न देखा। खली के कबाब खाते देख कर मुझे चाहिये था कि मजाक उडाऊं, कहकहे लगाऊं कि वाह जी वाह, दूल्हा भाई, खली के कबाब खा रहे हो!'मगर जानो किसी ने मेरा नरखरा दबोच लिया हो।'

बी - अम्मां ने मुझे जल्कर वापस बुला लिया और मुंह ही मुंह में मुझे कोसने लगीं। अब मैं उनसे क्या कहती, कि वो मजे से खा रहा है कमबख्त!

'राहत भाई! कोफ्ते पसन्द आये? बी - अम्मां के सिखाने पर मैं ने पूछा।'

जवाब नदारद।

'बताइये न?'

'अरी ठीक से जाकर पूछ! ' बी - अम्मां ने टहोका दिया।

'आपने लाकर दिये और हमने खाये। मजेदार ही होंगे।'

'अरे वाह रे जंगली! ' बी - अम्मां से न रहा गया।

'तुम्हें पता भी न चला, क्या मजे से खली के कबाब खा गये!'

'खली के? अरे तो रोज क़ाहे के होते हैं? मैं तो आदी हो चला हूं खली और भूसा खाने का।'

बी - अम्मां का मुंह उतर गया। बी - अम्मां की झुकी हुई पलकें ऊपर न उठ सकीं। दूसरे रोज बी - आपा ने रोजाना से दुगुनी सिलाई की और फिर जब शाम को मैं खाना लेकर गयी तो बोले -

'कहिये आज क्या लायी हैं? आज तो लकडी क़े बुरादे की बारी है।'

'क्या हमारे यहां का खाना आपको पसन्द नहीं आता? ' मैं ने जलकर कहा।
'ये बात नहीं, कुछ अजीब - सा मालूम होता है। कभी खली के कबाब तो कभी भूसे की तरकारी।'
मेरे तन बदन में आग लग गयी। हम सूखी रोटी खाकर इसे हाथी की खुराक दें। घी टपकतप परांठे ठुसाएं। मेरी बी - आपा को जुशांदा नसीब नहीं और इसे दूध मलाई निगलवाएं। मैं भन्ना कर चली आयी।
बी - अम्मां की मुंहबोली बहन का नुस्खा काम आ गया और राहत ने दिन का ज्यादा हिस्सा घर ही में गुज़ारना शुरु कर दिया। बी - आपा तो चूल्हे में जुकी रहतीं, बी - अम्मां चौथी के जोडे सिया करतीं और राहत की गलीज आँखों के तीर मेरे दिल में चुभा करते। बात - बेबात छेडना, खाना खिलाते वक्त कभी पानी तो कभीनमक के बहाने। और साथ - साथ जुमलेबाजी! मैं खिसिया कर बी आपा के पास जा बैठती। जी चाहता, किसी दिन साफ कह दूं कि किसकी बकरी और कौन डाले दाना - घास! ऐ बी, मुझसे तुम्हारा ये बैल न नाथा जायेगा। मगर बी - आपा के उलझे हुए बालों पर चूल्हे की उडती हुई राख नहीं मेरा कलेजा धक् से हो गया। मैं ने उनके सफेद बाल लट के नीचे छुपा दिये। नास जाये इस कमबख्त नजले का, बेचारी के बाल पकने शुरु हो गये।
राहत ने फिर किसी बहाने मुझे पुकारा।
'उंह!' मैं जल गयी। पर बी आपा ने कटी हुई मुर्गी की तरह जो पलट कर देखा तो मुझे जाना ही पडा।
'आप हमसे खफा हो गयीं?' राहत ने पानी का कटोरा लेकर मेरी कलाई पकड ली। मेरा दम निकल गया और भागी तो हाथ झटककर।
'क्या कह रहे थे? ' बी - आपा ने शर्मो हया से घुटी आवाज में कहा। मैं चुपचाप उनका मुंह ताकने लगी।
'कह रहे थे, किसने पकाया है खाना? वाह - वाह, जी चाहता है खाता ही चला जाऊं। पकानेवाली के हाथ खा जाऊं। ओह नहीं खा नहीं जाऊं, बल्कि चूम लूं।' मैं ने जल्दी -

जल्दी कहना शुरु किया और बी - आपा का खुरदरा, हल्दी - धनिया की बसांद में सडा हुआ हाथ अपने हाथ से लगा लिया। मेरे आंसू निकल आये। ये हाथ! मैं ने सोचा, जो सुबह से शाम तक मसाला पीसते हैं, पानी भरते हैं, प्याज काटते हैं, बिस्तर बिछाते हैं, जूते साफ करते हैं! ये बेकस गुलाम की तरह सुबह से शाम तक जुटे ही रहते हैं। इनकी बेगार कब खत्म होगी? क्या इनका कोई खरीदार न आयेगा? क्या इन्हें कभी प्यार से न चूमेगा?

क्या इनमें कभी मेंहदी न रचेगी? क्या इनमें कभी सुहाग का इतर न बसेगा? जी चाहा, जोर से चीख पड़ूं।

'और क्या कह रहे थे? ' बी - आपा के हाथ तो इतने खुरदरे थे पर आवाज ऌतनी रसीली और मीठी थी कि राहत के अगर कान होते तो मगर राहत के न कान थे न नाक, बस दोजख़ ज़ैसा पेट था!

'और कह रहे थे, अपनी बी - आपा से कहना कि इतना काम न किया करें और जोशान्दा पिया करें।'

'चल झूठी!'

'अरे वाह, झूठे होंगे आपके वो'

'अरे, चुप मुरदार!' उन्होंने मेरा मुंह बन्द कर दिया।

'देख तो स्वेटर बुन गया है, उन्हें दे आ। पर देख, तुझे मेरी कसम, मेरा नाम न लीजो।'

'नहीं बी - आपा! उन्हें न दो वो स्वेटर। तुम्हारी इन मुट्ठी भर हड्डियों को स्वेटर की कितनी जरूरत है? मैं ने कहना चाहा पर न कह सकी।'

'आपा - बी, तुम खुद क्या पहनोगी?'

'अरे, मुझे क्या जरूरत है, चूल्हे के पास तो वैसे ही झुलसन रहती है।'

स्वेटर देख कर राहत ने अपनी एक आई - ब्रो शरारत से ऊपर तान कर कहा - 'क्या ये स्वेटर आपने बुना है?'

'नहीं तो।'

'तो भई हम नहीं पहनेंगे।'

मेरा जी चाहा कि उसका मुंह नोच लूं। कमीने मिट्टी के लौंदे! ये स्वेटर उन हाथों ने बुना है जो जीते - जागते गुलाम हैं। इसके एक - एक फन्दे में किसी नसीबों जली के अरमानों की गरदनें फंसी हुई हैं। ये उन हाथों का बुना हुआ है जो नन्हे पगोडे झुलाने के लिये बनाये गये हैं। उनको थाम लो गधे कहीं के और ये जो दो पतवार बडे से बडे तूफान के थपेडों से तुम्हारी जिन्दगी की नाव को बचाकर पार लगा देंगे। ये सितार की गत न बजा सकेंगे। मणिपुरी और भरतनाटयम की मुद्रा न दिखा सकेंगे, इन्हें प्यानो पर रक्स करना नहीं सिखाया गया, इन्हें फूलों से खेलना नहीं नसीब हुआ, मगर ये हाथ तुम्हारे जिस्म पर चरबी चढाने के लिये सुबह शाम सिलाई करते हैं, साबुन और सोडे में डुबकियां लगाते हैं, चूल्हे की आंच सहते हैं। तुम्हारी गलाजतें धोते हैं। इनमें चूडियां नहीं खनकती हैं। इन्हें कभी किसी ने प्यार से नहीं थामा।
मगर मैं चुप रही। बी - अम्मां कहती हैं, मेरा दिमाग तो मेरी नयी - नयी सहेलियों ने खराब कर दिया है। वो मुझे कैसी नयी - नयी बातें बताया करती हैं। कैसी डरावनी मौत की बातें, भूख की और काल की बातें। धडक़ते हुए दिल के एकदम चुप हो जाने की बातें।
'ये स्वेटर तो आप ही पहन लीजिये। देखिये न आपका कुरता कितना बारीक है!'
जंगली बिल्ली की तरह मैं ने उसका मुंह, नाक, गिरेबान नोच डाले और अपनी पलंगडी पर जा गिरी। बी - आपा ने आखिरी रोटी डालकर जल्दी - जल्दी तसले में हाथ धोए और आंचल से पांछती मेरे पास आ बैठीं।
'वो बोले? ' उनसे न रहा गया तो धडक़ते हुए दिल से पूछा।
'बी - आपा, ये राहत भाई बडे ख़राब आदमी हैं।' मैं ने सोचा मैं आज सब कुछ बता दूंगी।
'क्यों?' वो मुस्कुरायी।
'मुझे अच्छे नहीं लगते देखिये मेरी सारी चूडियां चूर हो गयीं! ' मैं ने कांपते हुए कहा।
'बडे शरीर हैं!' उन्होंने रोमान्टिक आवाज में सरमा कर कहा।
'' बी - आपा सुनो बी - आपा! ये राहत अच्छे आदमी नहीं 'मैं ने सुलग कर कहा।'

'आज मैं बी-अम्मां से कह दूंगी।'

'क्या हुआ? 'बी-अम्मां ने जानमाज बिछाते हुए कहा।

'देखिये मेरी चूडियां बी - अम्मां! '

'राहत ने तोड ड़ालीं?' बी - अम्मां मसर्रत से चहक कर बोलीं।

'हां!'

'खूब किया! तू उसे सताती भी तो बहुत है।ए है, तो दम काहे को निकल गया! बडी मोम की नमी हुई हो कि हाथ लगाया और पिघल गयीं!' फिर चुमकार कर बोलीं, 'खैर, तू भी चौथी में बदला ले लीजियो, कसर निकाल लियो कि याद ही करें मियां जी!' ये कह कर उन्होंने नियत बांध ली। मुंहबोली बहन से फिर कॉनफ्रेन्स हुयी और मामले को उम्मीद - अफ्ज़ा रास्ते पर गामजन देखकर अज़हद खुशनूदी से मुस्कुराया गया। 'ऐ है, तू तो बडी ही ठस है। ऐ हम तो अपने बहनोइयों का खुदा की कसम नाक में दम कर दिया करते थे।' और वो मुझे बहनोइयों से छेड छाड क़े हथकण्डे बताने लगीं कि किस तरह सिर्फ छेडछाड क़े तीरन्दाज नुस्खे से उन दो ममेरी बहनों की शादी करायी, जिनकी नाव पार लगने के सारे मौके हाथ से निकल चुके थे। एक तो उनमें से हकीम जी थे।जहां बेचारे को लडक़ियां - बालियां छेडतीं, शरमाने लगते और शरमाते - शरमाते एख्तेलाज क़े दौरे पडने लगते। और एक दिन मामू साहब से कह दिया कि मुझे गुलामी में ले लीजिये। दूसरे वायसराय के दफ्तर में क्लर्क थे। जहां सुना कि बाहर आये हैं, लडक़ियां छेडना शुरु कर देती थीं। कभी गिलौरियों में मिर्चें भरकर भेज दें, कभी सेवंईयों में नमक डालकर खिला दिया।

'ए लो, वो तो रोज आने लगे। आंधी आये, पानी आये, क्या मजाल जो वो न आयें। आखिर एक दिन कहलवा ही दिया। अपने एक जान - पहचान वाले से कहा कि उनके यहां शादी करा दो। पूछा कि भई किससे? तो कहा, ' किसी से भी करा दो।'और खुदा झूठ न बुलवाये तो बडी बहन की सूरत थी कि देखो तो जैसे बैंचा चला आता है। छोटी तो बस सुब्हान अल्लाह! एक आंख पूरब तो दूसरी पच्छम। पन्द्रह तोले सोना दिया बाप ने और साहब के दफ्तर में नौकरी अलग दिलवायी।'

'हां भई, जिसके पास पन्द्रह तोले सोना हो और बडे साहब के दफ्तर की नौकरी, उसे लडक़ा मिलते देर लगती है?' बी - अम्मां ने ठण्डी सांस भरकर कहा।
'ये बात नहीं है बहन। आजकल लडक़ों का दिल बस थाली का बैंगन होता है। जिधर झुका दो, उधर ही लुढक़ जायेगा।'
मगर राहत तो बैंगन नहीं अच्छा - खासा पहाड है। झुकाव देने पर कहीं मैं ही न फंस जाऊं, मैं ने सोचा। फिर मैं ने आपा की तरफ देखा। वो खामोश दहलीज पर बैठी, आटा गूंथ रही थीं और सब कुछ सुनती जा रही थीं। उनका बस चलता तो जमीन की छाती फाडक़र अपने कुंवारेपन की लानत समेत इसमें समा जातीं।
क्या मेरी आपा मर्द की भूखी हैं? नहीं, भूख के अहसास से वो पहले ही सहम चुकी हैं। मर्द का तसव्वुर इनके मन में एक उमंग बन कर नहीं उभरा, बल्कि रोटी - कपडे क़ा सवाल बन कर उभरा है। वो एक बेवा की छाती का बोझ हैं। इस बोझ को ढकेलना ही होगा।
मगर इशारों - कनायों के बावज़ूद भी राहत मियां न तो खुद मुंह से फूटे और न उनके घर से पैगाम आया। थक हार कर बी - अम्मां ने पैरों के तोडे ग़िरवी रख कर पीर मुश्किलकुशा की नियाज दिला डाली। दोपहर भर मुहल्ले - टोले की लडक़ियां सहन में ऊधम मचाती रहीं। बी - आपा शरमाती लजाती मच्छरों वाली कोठरी में अपने खून की आखिरी बूंदें चुसाने को जा बैठीं। बी - अम्मां कमजाेरी में अपनी चौकी पर बैठी चौथी के जोडे में आखिरी टांके लगाती रहीं। आज उनके चेहरे पर मंजिलों के निशान थे। आज मुश्किलकुशाई होगी। बस आंखों की सुईयां रह गयी हैं, वो भी निकल जायेंगी। आज उनकी झुर्रियों में फिर मुश्किल थरथरा रही थी। बी - आपा की सहेलियां उनको छेड रही थीं और वो खून की बची - खुची बूंदों को ताव में ला रही थीं। आज कई रोज से उनका बुखार नहीं उतरा था। थके हारे दिये की तरह उनका चेहरा एक बार टिमटिमाता और फिर बुझ जाता। इशारे से उन्होंने मुझे अपने पास बुलाया। अपना आंचल हटा कर नियाज क़े मलीदे की तश्तरी मुझे थमा दी।
'इस पर मौलवी साहब ने दम किया है।' उनकी बुखार से दहकती हुई गरम - गरम

सांसें मेरे कान में लगीं।
तश्तरी लेकर मैं सोचने लगी - मौलवी साहब ने दम किया है। ये मुकद्दस मलीदा अब राहत के पेट में झौंका जायेगा। वो तन्दूर जो छ: महीनों से हमारे खून के छींटों से गरम रखा गया; ये दम किया हुआ मलीदा मुराद बर लायेगा। मेरे कानों में शादियाने बजने लगे। मैं भागी - भागी कोठे से बारात देखने जा रही हूं। दूल्हे के मुंह पर लम्बा सा सेहरा पडा है, जो घोडे क़ी अयालों को चूम रहा है। चौथी का शहानी जोडा पहने, फूलों से लदी, शर्म से निढाल, आहिस्ता - आहिस्ता कदम तोलती हुई बी - आपा चली आ रही हैं चौथी का जरतार जोडा झिलमिल कर रहा है। बी - अम्मां का चेहरा फूल की तरह खिला हुआ है बी - आपा की हया से बोझिल निगाहें एक बार ऊपर उठती हैं। शुकराने का एक आंसू ढलक कर अफ्शां के जर्रों में कुमकुमे की तरह उलझ जाता है। 'ये सब तेरी मेहनत का फल है।' बी - आपा कह रही हैं।
हमीदा का गला भर आया
'जाओ न मेरी बहनो!' बी - आपा ने उसे जगा दिया और चौंक कर ओढनी के आंचल से आंसू पौंछती डयोढी क़ी तरफ बढी।
'ये मलीदा,' उसने उछलते हुए दिल को काबू में रखते हुए कहा उसके पैर लरज रहे थे, जैसे वो सांप की बांबी में घुस आयी हो। फिर पहाड ख़िसकाऔर मुंह खोल दिया। वो एक कदम पीछे हट गयी। मगर दूर कहीं बारात की शहनाइयों ने चीख लगाई, जैसे कोई दिन का गला घोंट रहा हो। कांपते हाथों से मुकद्दस मलीदे का निवाला बना कर सने राहत के मुंह की तरफ बढा दिया।
एक झटके से उसका हाथ पहाड क़ी खोह में डूबता चला गया नीचे तअफ्फ़ुन और तारीकी से अथाह ग़ार की गहराइयों मेंएक बडी सी चट्टान ने उसकी चीख को घोंटा। नियाज मलीदे की रकाबी हाथ से छूटकर लालटेन के ऊपर गिरी और लालटेन ने जमीन पर गिर कर दो चार सिसकियां भरीं और गुल हो गयी। बाहर आंगन में मुहल्ले की बहू - बेटियां मुश्किलकुशा (हजरत अली) की शान में गीत गा रही थीं।
सुबह की गाडी से राहत मेहमाननवाज़ी का शुक्रिया अदा करता हुआ चला गया।

उसकी शादी की तारीख तय हो चुकी थी और उसे जल्दी थी।उसके बाद इस घर में कभी अण्डे तले न गये, परांठे न सिकें और स्वेटर न बुने। दिक ज़ो एक अरसे से बी - आपा की ताक में भागी पीछे - पीछे आ रही थी, एक ही जस्त में उन्हें दबोच बैठी। और उन्होंने अपना नामुराद वजूद चुपचाप उसकी आगोश में सौंप दिया।
और फिर उसी सहदरी में साफ - सुथरी जाजम बिछाई गई। मुहल्ले की बहू - बेटियां जुडीं। क़फन का सफेद - सफेद लट्ठा मौत के आंचल की तरह बी - अम्मां के सामने फैल गया। तहम्मुल के बोझ से उनका चेहरा लरज रहा था। बायीं आई - ब्रो फडक़ रही थी। गालों की सुनसान झुर्रियां भांय - भांय कर रही थीं, जैसे उनमें लाखों अजदहे फुंकार रहे हों।
लट्ठे के कान निकाल कर उन्होंने चौपरत किया और उनके फिल में अनगिनत कैंचियां चल गयीं। आज उनके चेहरे पर भयानक सुकून और हरा - भरा इत्मीनान था, जैसे उन्हें पक्का यकीन हो कि दूसरे जोडों की तरह चौथी का यह जोडा न सेंता जाये।
एकदम सहदरी में बैठी लडक़ियां बालियां मैनाओं की तरह चहकने लगीं। हमीदा मांजी को दूर झटक कर उनके साथ जा मिली। लाल टूल पर सफेद गज़ी का निशान! इसकी सुर्खी में न जाने कितनी मासूम दुल्हनों का सुहाग रचा है और सफेदी में कितनी नामुराद कुंवारियों के कफन की सफेदी डूब कर उभरी है। और फिर सब एकदम खामोश हो गये। बी - अम्मां ने आखिरी टांका भरके डोरा तोड लिया। दो मोटे - मोटे आंसू उनके रूई जैसे नरम गालों पर धीरे धीरे रेंगने लगे। उनके चेहरे की शिकनों में से रोशनी की किरनें फूट निकलीं और वो मुस्कुरा दीं, जैसे आज उन्हें इत्मीनान हो गया कि उनकी कुबरा का सुआ जोडा बनकर तैयार हो गया हो और कोए ए अदम में शहनाइयां बज उठेंगी।